भारतीय संस्कृति के सामाजिक आयाम

–डॉ0 अखिलेश कुमार त्रिपाठी
असि0 प्रोफेसर–समाजशास्त्र
टी0एन0पी0जी0 कॉलेज, टाण्डा–अम्बेडकर नगर

संस्कृति सरिता का प्रवाह मार्ग है जो समय–समय पर बदलता रहता है इसलिए संस्कृति को समाज व्यवस्था के साथ मिलाकर देखा जाता है। संस्कृति की स्त्रोतस्विनी अपने परम्परित मार्ग को सामाजिक संस्थाओं (जो कालांतर में प्राणहीन हो जाती है।) छोड़कर बढ़ती हैं और नये क्षेत्रों को अभिषिक्त करती है, उसके प्रश्रय से नयी संस्थाएं विकसित और समृद्ध होती हैं। संस्कृत जीवन के उन समतोलों का नाम है, जो मनुष्य के अन्दर व्यवहार, ज्ञान और विवेक उत्पन्न करते हैं। संस्कृति मनुष्य के सामाजिक व्यवहारों कों निश्चित करती है और मानवीय संस्थाओं को गति प्रदान करती है। संस्कृति साहित्य और भाषा को संवारती है और मानव जीवन के आदर्श एवं सिद्धान्तों को प्रकाश्मान करती है। संस्कृति समाज के भावनात्मक एवं आदर्श विचारों में निहित है। समतोलों को स्वीकार कर समाज सहस्त्रों वर्ष तक चलता है, तब संस्कृति महान रूप धारण करती है। जीवन के सर्वतोन्मुखी विकास हेतू एक अपरिहार्य साधन है, संस्कृति।

भारतीय संस्कृति के सामाजिक आयामों का अध्ययन हमें भारतीय संस्कृति के एंतिहासिक परिप्रेक्ष्य में यथा हड़प्पा काल, वैदिक काल, कुषाण काल, गुप्त काल, सल्तनत काल, मुगल काल एवं आधुनिक काल के परिप्रेक्ष्य में देखना होगा क्योंकि विभिन्न कालों में समाज व्यवस्था में परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है।

हड़प्पा संस्कृति का समाजः–

हड़प्पा संस्कृति की खोज पुरातत्व विज्ञान की महत्वपूर्ण खोजों में से एक है। प्राप्त पुरातातविक सामग्री से स्पष्ट होता है कि समाज की इकाई परिवार था। मोहन जोदड़ो में स्त्री मूर्तियों के बहुसंख्या में प्राप्त होने के कारण विद्धानो की धारणा है कि तात्कालिक समाज मातृ प्रधान था अस्त्र शस्त्रों की अल्पता से प्रतीत होता है कि सिंधु घाटी के निवासी युद्ध प्रेमी नहीं थे, उनका सामाजिक जीवन सुख शांतिपूर्ण था। समाज में अनेक काम करने वाले लोग रहते थे। काशीनाथ नारायण दीक्षित ने समाज को दो वर्गो में विभक्त किया हैख् उच्च वर्ग जिसमें पुरोहित वैद्य, ज्योतिषी आदि निम्न वर्ग में मछुए, मल्लाह, कृषक, वणिक चरवाहे आदि आते हैं।

ऋग्वेद कालीन समाजः–

ऋग्वेद कालीन समाज आर्य एवं आर्येतर जातियों से मिलकर बना था। प्रमुखतः ये दो ही वर्ग थे किन्तु आर्थिक एवं सामाजिक जीवन के विकास के साथ–साथ कई वर्गों की उत्पत्ति हुई। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए श्रम विभाग था। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में उस विभाग का उल्लेख किया गया है। "ब्राम्हणोअस्य मुखमासीद् बाहु राजन्यः कृतः। उरू तदस्य युद्धैश्यः पदभ्यां शूद्रो अजायता।" अर्थात विराट पुरुष के मुख से ब्राम्हण, भुजाओं से क्षत्रिय, जंघाओं से वैश्य तथा पैरों से शूद्र उत्पन्न हुए। किन्तु ये वर्ग अभी पैतृक नहीं बने थे वर्ण व्यवस्था लचीली थी।

इस युग में स्त्रियों को समाज में उच्चव व साम्मानित स्थान प्राप्त था। वे धार्मिक कृत्यों, सामाजिक उत्सव व समारोह आदि में पुरुष के समान आसन ग्रहण करती थी प्रदाप्रथा का प्रचलन नहीं था स्त्रियां भी उच्चच शिक्षा प्राप्त करती थी।

उत्तर वैदिक कालीन समाजः–

उत्तर अवैदिक काल में यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्वेद, ब्राम्हण साहित्य तथा उपनिषद् साहित्य की रचना हुई। उत्तर वैदिक युग में ब्राहम्णों का प्रभुत्व बढ़ने से सामाजिक जीवन काफी बदल चुका था। जाति व्यवस्था काफी जटिल हो गई थी। स्त्रियों के सम्मान में कमी आयी तथा आश्रम व्यवस्था सामाजिक जीवन का एक अंग बन चुकी थी।

उत्तर वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था अधिक स्पष्ट हो गई और उसके अंग अधिक रूढ़यात्मक बन गये थे उस काल में समाज का विभाजन ब्राहम्ण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र में हो गया था जो लोग कर्मकाण्ड, धार्मिक कृत्यों में रूचि रखते थे वे ब्राम्हण कहलाए जो युद्ध में रत थे और राजनीति में सक्रिय भाग लेते थे वे क्षत्रिय कहलाए, जो वणिक, कृषक और शिल्पी थे वे वैश्य कहलाए। इन तीन वर्गो की ओर अन्य शारीरिक श्रम के लिए जो दास, दस्यु और अनार्यो में थे की संज्ञा शूद्र हुई। फिर भी इस काल की द्वेषात्मक रूढ़िवादी व्यवस्था अभी सर्वथा अनजानी थी।

आर्यो ने अपने जीवन को आश्रमों में विभक्त किया था जिससे उसके सभी अंगो का समुचित विकाश हो। आश्रम चार थे– ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। विद्यार्थी गुरूकुल में रहकर वेदाध्ययन करता था जन्म से 25 वर्ष की आयु का काल ब्रम्हचर्य आश्रम का था ब्रम्हचर्य व्रत का पालन करते हुए ज्ञानार्जन करना इस आश्रम का लक्ष्य था। 26 से 50 वर्ष की आयु का काल गृहस्थाश्रम कहलाता था। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात ब्रम्हचारी विवाह कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता था गृहस्थाश्रम तीनों आश्रमों का मूलाधार था क्योंकि तीनो आश्रम गृहस्थ के दान पर निर्भर थे। गृहस्थ धनोपार्जन कर समाज का पालन–पोषण करता था। इस आश्रम में वह पांच यज्ञ करके तीन ऋणों से छुटकारा पाता था।

उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों का समाज में पहले जैसा सम्मान नहीं रहा। उत्तर वैदिक युग के प्रसिद्ध कानून निर्माता मनु ने लिखा है कि विवाह पूर्व स्त्री को अपने माता–पिता की, विवाह के बाद अपने पति की एवं वृद्धावस्था में अपने पुत्रों की आज्ञा का पालन करना चाहिए बाल विवाह प्रचलन प्रारंभ हो गया था स्त्रियों के साथ व्यवहार में अंतर आने लगा था।

मौर्यकालीन समाज व्यवस्थाः–

मौर्यकालीन समाज रचना का ज्ञान हमें मेगस्थनीज के विवरण एवं अर्थशास्त्र द्वारा होता है। कौटिल्य के अनुसार वर्ण और आश्रम सामाजिक संगठन का मूलाधार था। ग्रीक लेखकों के अनुसार समान की दृष्टि से ब्राम्हणों एवं श्रमणों का का स्थान सर्वोत्कृष्ट था। यज्ञ के अवसर पर लोग सुरापान करते थे।अधिकतर लोग ग्रामों में रहते थे और उनका जीवन सामानयतः ठीक था। कानून सादे थे चोरी बहुत कम होती थी बहु विवाह प्रचलित था प्रायः संयुक्त परिवार की व्यवस्था थी संभवतः पर्दे की प्रथा नहीं थी। विधवा विवाह का प्रचलन था वैश्यावृत्ति भी प्रचलित थी वे ललित कलाओं में प्रवीण होती थी, वे राज्य की आय का साधन था।

गुप्त कालीन सामाजिक जीवनः–

गुप्त काल में वर्ण व्यवस्था सामाजिक जीवन की एक प्रमुख विशेषता रही है। चारो वर्ण अलग–अलग नियमों अनुसार रहते थे और अपने वर्ण में ही विवाह करते थे। राजा वर्णों एवं आश्रम का रक्षक था। ब्राम्हणों को समाज में सर्वोत्म स्थान प्राप्त था। ब्राम्हणों को अनेक सुविधाएं सुलभ थी। उदाहरणार्थ वे कर आदि से मुक्त थे उन्हे मृत्युदण्ड नहीं दिया जाता था। क्षत्रिय शासक और सैनिक होते थे। शूद्रों के लिए कठोर दंड की व्यवस्था थी। गुप्त काल में आश्रम व्यवस्था प्रचलित थी। सम्मलित कुटुम्ब गुप्त कालीन, हिन्दू समाज की आधारशिला थी। विवाह एक प्रधान संस्कार था। अग्नि को हवि पति–पत्नी को एक साथ देनी होती थी। स्मृति कारों का मत है कि रजस्वला होने के पूर्व

कन्या का विवाह कर देना चाहिए। राज परिवार में बहु विवाह प्रथा प्रचलित थी। अनुलोम एवं प्रतिलोम दोनों प्रकार के विवाह उस समय प्रचलित थे दहेज और बाल विवाह की प्रथा प्रचलित न थी।

सल्तनत कालीन सामाजिक स्थितिः–

सल्तनत काल में वर्ण व्यवस्था में और जटिलता आ गयी। सामाजिक संगठन का मुख्य आधार वर्ण के स्थान पर जाति व्यवस्था थी। जाति बंधन और संकीर्णताएं अधिक कठोर हो गई थी। शूद्रो के भी दो वर्ग थे जिन्हे अधिक हीन समझा जाता था वे अस्पृश्य समझे जाने लगे थे। व्यवसाय वंशानुगत स्थिर होने लगा था एक वर्ग के भीतर अनेक वर्ग बनने लगे। सल्तनत कालीन मुस्लिम का प्रभाव प्रर्याप्त रूप में ब्राम्हणों की स्थिति एवं उनके शासन कार्यों पर पड़ा। ब्राम्हणों का प्रभाव पहले की अपेक्षा कम हो गया। हिन्दू और मुस्लिम दोनों धर्माम्वलम्बियों में दास प्रथा पचलित थी। उनका क्रय विक्रय होता था। इस काल में स्त्रियों की स्थिति में हास होने लगा था मुसलमानो के भय एवं अत्याचार के कारण बाल विवाह प्रचलित हो गये थे।

मुगल कालीन सामाजिक स्थितिः–

मुगल कालीन भारत का समाज जागीरदारी समाज था। मुसलमानी समाज व्यवस्था से तत्कालीन भारतीय समाज प्रभावित हुआ। दो भिन्न संस्कृतियों के पारस्परिक प्रभाव के परिणामस्वरूप एक नवीन सामाजिक इतिहास के अध्याय का श्रीगणेश हुआ हिन्दू मुसलमानों का मेल मिलाप अकबर के राज्यकाल में अधिक बढ़ गया अकबर ने हिन्दुओं के साथ सहिष्णुता की नीति अपनायी और राजपूत राजकुमारियों से विवाह किये। उसने जाति पांत, रूप रंग और नस्ल के भेद भाव के विना योग्य व्यक्तियों को प्रशासकीय पद दिये। इस काल में मुसलमानों के वंशज भी अपने को भारतीय कहने में गर्व का अनुभव करने लगे। वेश–भूषा, रहन–सहन, खान–पान आदि में एक दूसरे की संस्कृति का आदान–प्रदान हुआ। किन्तु इस्लाम स्वीकार करने के बाद भी भारतीय लोगों ने अनेक पुराने रीति–रिवाजों को नहीं तोड़ा।

समाज में स्त्रियों के अधिकार सीमित रहे वे जन्म से मृत्यु तक पुरूष के संरक्षण में रहती थीं उस काल में विवाह का बड़ा महत्व था दोनों समाजों में बाल विवाह प्रचलित था। इस काल में समाज में सती– प्रथा, जौहर–प्रथा तथा दास–प्रथा जैसी कुरीतियां भी विद्यमान थीं।

उपसंहारः–

भारतीय सामाजिक संरचना के आधार के रूप में वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, संस्कार, पुरूषार्थ, कर्म का सिद्धान्त, ऋण की अवधारणएं रही है जिनमें एक चिंतन, आदर्श जीवन शैली, तथा सम्पूर्ण जीवन दर्षन निहित है जो मानव एवं समाज कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती है। यही कारण है कि अनेक सुस्कृतियां पतन के साथ–साथ संसार से विलुप्त हो गयी लेकिन भारतीय संस्कृति अनेक तूफान एवं झपेड़ों को सह कर भी आज अडिग है। विदेशियों और विधर्मियों के लगातार हमले एवं इसे समूल नष्ट करने की कोशिशों के बाद भी यह जीवित है। इस जीवन शक्ति के मूल में सहस्य है, जो इसे हमेशा प्राणवायु प्रदान करती रहेगी वह रहस्य है–

1. संसार में अहिंसा, शांति, समन्वय, मैत्री, दया और मानवता का प्रचार करने वाले हमारे वेदांत और उपनिषदों का अमर संदेश।
2. भारतीय संस्कृति का सृजन करने वाले महर्षियों की त्याग, तपस्या, बलिदान और निःस्वार्थ मानव सेवा की भावना।
3. गीता के निष्काम कर्म का अनोखा उपदेश।

उपरोक्त रहस्य पर आधारित भारतीय संस्कृति न केवल अपने लिए बल्कि सम्पूर्ण मानवता के कल्याण के लिए है। आज संसार जिन संकटों से गुजर रहा है, अशांति, हिंसा, घृणा एवं वैमनस्य का वातावरण

चॅहुओर फैला हुआ है ऐसी परिस्थिति में भारतीय संस्कृति का वसुधैव कुटुम्बकम का भाव शांति, अहिंसा, सहिष्णुता तथा मैत्री का संदेश सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सुची

1. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृष्ठ 123, शारदा संस्थान वाराणसी, प्रकाशन वर्ष 1958।
2. भारत का सांस्कृतिक इतिहास, डॉ0 राजेन्द्र पाण्डेय, पृष्ठ 176, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रंथ एअकादमी लखनऊ प्रकाशन वर्ष 1976।
3. संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ 512–13, रामधारी सिंह दिनकर, साहित्य अकादमी प्रकाशन वर्ष 1956।
4. भारतीय संस्कृति कुछ विचार–डॉ0 सर्वपल्ली राधा कृष्णन, पृष्ठ 104, राजपाल प्रकाशन, प्रकाशन वर्ष 2005।

●